International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 678-680

समकालीन हिन्दी रंगमंच और मोहन राकेश के नाटक

सोनिया राठी

एम.ए. (स्वर्ण पदक विजेता), यु.जी.सी.नेट, एम.फिल., पीएच.डी.(शोधार्थी), जैन विश्वविद्यालय, बेंगलोर, कर्नाटक, भारत।

सारांश

हर संवेदनशील रचनाकार का साहित्य उसके व्यक्तित्व की पहचान होता है। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार व्यक्ति और उसकी कृति में रक्त का संबंध है, अतएव एक का विश्लेषण दूसरे को साथ लिये बिना असंभव है। मदन मोहन गुगलानी से मोहन राकेश जिस परिवेश और परिस्थिति में ढल कर तैयार हुआ उसकी छाया हम उनकी रचनाओं में देख सकते हैं। मोहन राकेश आधुनिक हिन्दी रंगकर्म की एक विशिष्ट, प्रेरक और प्रखर प्रतिभा थे। उनके नाटकों के तिलिस्म को तोड़ने और उनके वास्तविक महत्त्व को जानने की कुंजी उनके सूक्ष्म, जटिल एवं सम्मोहक रंग-शिल्प में छिपी है। एकाध अपवाद को छोड़कर समकालीन हिन्दी भारतीय रंगमंच का शायद ही कोई उल्लेखनीय निर्देशक या कलाकार होगा जिसने कभी मोहन राकेश का कोई छोटा-बड़ा नाटक न किया हो। मोहन राकेश बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार है। किंतु समकालीन नाटककार के रूप में उनका स्थान सर्वोपरि है। आधुनिक हिन्दी नाटक के विकास यात्रा में 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस' तथा 'आधे-अधूरे' ने महत्त्वपूर्ण योगदान निभाया है।

मूल शब्द: समकालीन हिन्दी, मोहन राकेश, नाटक, संवेदनशील रचनाकार, हिन्दी रंगकर्म

प्रस्तावना

बहुमुखी प्रतिभा के धनी मोहन राकेश ने गद्य की अनेक विधाओं में काम किया किन्तु उनकी विशिष्ट पहचान एक संवेदनशील नाटककार, उपन्यासकार और कहानीकार के रूप में है। मोहन राकेश का जन्म 7 जनवरी 1924 को अमृतसर में हुआ। इनका मूल नाम मदन मोहन गुगलानी था। पहली बार मदन मोहन राकेश के नाम से उनकी कहानी 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुई और बाद में मोहन राकेश के नाम से हिन्दी साहित्य जगत में चर्चित हो गये। मोहन राकेश बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार है। उन्होंने नाटक, कहानी, उपन्यास, यात्रा विवरण, निबंध आदि लिखकर साहित्य क्षेत्र में अपना स्थान स्वयं निर्धारित किया है। किंतु नाटककार के रूप में मोहन राकेश को विशेष ख्याति मिली है। मोहन राकेश को कहानी के बाद सफलता नाट्य-लेखन के क्षेत्र में मिली। हिंदी नाटकों में भारतेंदु और प्रसाद के बाद का दौर मोहन राकेश का दौर है जिसे हिंदी नाटकों को फिर से रंगमंच से जोड़ा। उन्होंने अच्छे नाटक लिखे और हिन्दी नाटक को अँधेरे बन्द कमरों से बाहर निकाला और उसे युगों के रोमानी ऐन्द्रजालिक सम्मोहक से उबारकर एक नए दौर के साथ जोड़कर दिखाया। वस्तुतः मोहन राकेश के नाटक केवल हिन्दी के नाटक नहीं हैं। वे हिन्दी में लिखे अवश्य गए हैं, किन्तु वे समकालीन भारतीय नाट्य प्रवृत्तियों के द्योतक हैं। उन्होंने हिन्दी नाटक को पहली बार अखिल भारतीय स्तर ही नहीं प्रदान किया वरन् उसके सदियों के अलग-थलग प्रवाह को विश्व नाटक की एक सामान्य धारा की ओर भी अग्रसर किया। प्रमुख भारतीय निर्देशकों इब्राहीम अलकाजी, ओम शिवपुरी, अरविन्द गौड़, श्यामानन्द जालान, राम गोपाल बजाज और दिनेश ठाकुर ने मोहन राकेश के नाटकों का निर्देशन किया। हिन्दी नाटक के क्षितिज पर मोहन राकेश का उदय उस समय हुआ जब स्वाधीनता के बाद पचास के दशक में सांस्कृतिक पुनर्जागरण का ज्वार देश में जीवन के हर क्षेत्र को स्पन्दित कर रहा था। उनके नाटकों ने न सिर्फ नाटक का आस्वाद, तेवर और स्तर ही बदल दिया, बल्कि हिन्दी रंगमंच की दिशा को भी प्रभावित किया। उसके पहले, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद जैसे प्रतिभावान रचनाकारों के बावजूद, हिन्दी नाटक अधिकांशतः या तो सस्ते में मनोरंजन का साधन बना हुआ था या फिर नाट्य पुस्तकों की दीवारों के पीछे बन्द था। पचास के दशक में उसे धीरे-धीरे एक अत्यन्त ही समर्थ किन्तु जटिल और परिश्रम तथा प्रशिक्षण-साध्य कला माध्यम के रूप में स्वीकृति मिलना शुरू हुआ, और साथ ही नाट्यकर्मियों से भी अधिक जागरूकता, संवेदनशीलता और कलात्मक गंभीरता की अपेक्षा होने लगी। 1958 में संगीत नाटक अकादमी द्वारा मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ का एक दिन' को सर्वश्रेष्ठ नाटक के लिए और कलकत्ते की नाट्यमंडली 'अनामिका' को विनोद रस्तोगी के 'नये हाथ' के सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुतीकरण के लिए पुरस्कारों में इस बदलती हुई स्थिति की ही स्वीकृति दी। उसके बाद से हिन्दी नाटक लगातार आगे बढ़ता रहा है। और सारी सीमाओं के बावजूद उसके क्रमशः हिन्दी के सृजनात्मक साहित्य के क्षेत्र में और देश के नाटक साहित्य में सार्थक स्थान हासिल किया है।

मोहन राकेश ने कथ्य, शिल्प और प्रयोग तीनों ही दृष्टियों के आधुनिक नाटकों की शुरुआत की। नाटक की रंग मंचीयता को ध्यान में रखते हुए इनके नाटक सफल नाटक हैं। यथार्थ धरातल से जुड़े, परिष्कृत नाट्य शिल्प वाले मोहन राकेश के नाटकों ने हिंदी नाटक और रंग मंच को राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित किया। मोहन राकेश के तीनों नाटकों में स्त्रीवादी चिंतन विकसित होता हुआ दिखाई देता है। 'आषाढ का एक दिन'(1958) में आदर्श भारतीय स्त्री का समर्पण है, जबकि 'लहरों के राजहंस' (1963) में स्त्री के अहं-पोषित रूप को अभिव्यक्ति मिली है, वहीं 'आधे-अधूरे' (1969) में आर्थिक रूप से सक्षम और आधुनिक स्वतंत्र नारी निकम्मे पुरुष से विरोध करती हुई अपने अधिकारों की प्राप्ति हेतु विद्रोह करती है। अपने अधूरेपन को भरने के लिए स्वतंत्र रूप से पूर्णता की खोज करती है तथा एक अधूरा नाटक 'पैर तले की जमीन है। मोहन राकेश के अंतिम नाटक का प्रकाशन उनके निधन के बाद हुआ। इसे वह अपूर्ण लिखा छोड़ गये थे इस नाटक को उनके मित्र कमलेश्वरजी ने पूरा किया। उनका प्रकाशित पहला नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' वास्तव में यही वह हिन्दी का पहला नाटक भी था जिसने हिन्दी रंगमंच के अपने स्वतंत्र स्वरूप की नींव भी रखी।

आषाढ़ का एक दिन

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया आधुनिक बोध के विविध आयामों को उद्घाटित करने वाला यह नाटक आधुनिक हिन्दी नाट्य युग का प्रथम सोपान कहा जा सकता है। इतिहास प्रसिद्ध कवि कालिदास के रूप में रचनाकार के सृजन के विविध द्वन्द्वों, कालिदास, मल्लिका, प्रियंगुमंजरी तथा विलोम जैसे पात्रों के रूप में आधुनिक स्त्री पुरुष के संबंधों की जटिलता को, परिवेश से कटे विवश आधुनिक मानव की पीड़ा को प्रस्तुत किया है। नाटक की भाषा पात्र और विषय वस्तु के अनुकूल और संप्रेषणीयता के गुण से युक्त है। संवाद-योजना, रंग-मंचीयता के अनुकूल क्षिप्र, चरित्रोद्घाटक, उद्देश्योन्मुख और प्रभावी है। अभिनेयता के लिये कथावस्तु, पात्रों की सीमित संख्या संक्षिप्त प्रेषणीय संवाद ध्वनि-संकेत, स्थान-संकलन की दृष्टि से यह सफल नाटक है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक की श्रृंखला में 'आषाढ़ का एक दिन' एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में उल्लेखनीय है। यह मोहन राकेश का सर्वप्रथम, बहुचर्चित तथा लोक प्रिय नाटक है। इसमें कवि कालिदास को एक प्रतीक के रूप में चित्रित किया है। 'आषाढ़ का एक दिन' में ऐतिहासिक पात्रों के साथ काल्पनिक पात्र भी है। मोहन राकेश ने इतिहास और कल्पना के सामंजस्य से प्राचीन और अर्वाचीन तथ्यों को समन्वित करके शाश्वत सत्य को युगानुरूप पुष्ट किया है। इस नाटक का कालिदास इतिहास का कालिदास नहीं, मोहन राकेश कालीन कालिदास है। 'आषाढ़ का एक दिन' हिंदी के युगान्तरकारी नाटककारों में से एक मोहन राकेश की एक कृति है। इस नाटक को हिंदी साहित्य में इसलिए जाना जाता है क्योंकि इस नाटक से हिंदी रंगमंच में यथार्थवाद की उस समय नयी परम्परा को एक बहुत मजबूत प्रोत्साहन मिला। मोहन राकेश ने कहा कि हिंदी रंगमंच पाश्चात्य रंगमंच से अत्यधिक भिन्न है। हमारे पास उपलब्धियों को देखने के लिए पाश्चात्य रंगमंच ही है क्योंकि हिंदी रंगमंच किसी एक विचार विशेष से बंधा हुआ नहीं है। मोहन राकेश ने हिंदी रंगमंच के उद्देश्य को भी परिभाषित करने की कोशिश की है। उनका कहना है कि रंगमंच को हिंदी भाषी प्रदेश की दैनिक आवश्यकताओं और उनकी सांस्कृतिक महत्त्व को अभिव्यक्त करने वाला होना चाहिए और ऐसा पाश्चात्य रंगमंच की अंधाधुंध तरीके से नकल करने से संभव नहीं है। और इस बात के लिए सराहना होनी चाहिए कि इस भाव की अभिव्यक्ति के लिए कालिदास को कथानक में सम्मिलित किया गया है, जो कि अपने आप में स्वयं बहुत बड़े नाटककार थे। अगर यह कहा जाये कि इस नाटक का नायक कालिदास न होकर मल्लिका थी तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस नाटक को हिंदी साहित्य के कुछ शुरुआती स्त्री-प्रधान रचनाओं में जगह दी जा सकती है। तृतीय अंक में कालिदास के संवाद, जहाँ उन्होंने अपने मानसिक द्वंद्व का चित्रण किया है, भी कथानक की स्त्री प्रधानता को कम नहीं कर सके। मल्लिका का चित्रण एक स्वतंत्र, आत्म-निर्भर, विचारशील, आधुनिक और निर्णायक नारी के रूप में हुआ है। इस नाटक में इतिहास के पुनरुत्थानवादी काव्य की झलक कहीं से भी देखने को नहीं मिलती। मोहन राकेश ने अपने आपको कालिदास और मल्लिका के प्रसंग तक सीमित रखा है। अनावश्यक रूप से संस्कृति का गुणगान इस नाटक में देखने को नहीं मिलता है। कहानी के लिहाज से भी यह अत्यंत सीमित और सार-गर्भित रचना कही जायेगी। पातंजलि के एक उल्लेख के अलावा कहीं भी लेखक ने पात्रों के ज्ञान को दर्शाने के लिए संदर्भों का सहारा नहीं लिया जिससे पूरे नाटक में गति बनी रही है। भाषा अत्यधिक संस्कृतिनिष्ठ नहीं है, पढ़ने पर प्रवाह बना रहता है। इस नाटक के मंचन देश-विदेश में हुये हैं जिनमें से कुछ प्रसिद्ध लोगों द्वारा अभिनीत और निर्देशित मंचनों के दृश्य इस पुस्तक में दिए गए हैं। मोहन राकेश को उनके नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' के सर्जक के रूप में जाना जाता है। यह नाटक सन् 1958 में प्रकाशित हुआ था। इसे हिंदी के आधुनिक नाटकों के क्रम का पहला नाटक भी कहा जाता है। सन् 1959 में इसे सर्वश्रेष्ठ नाटक होने का सम्मान संगीत नाटक अकादमी के द्वारा दिया गया था। मोहन राकेश के इस वैचारिक नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' को लेकर मणिकौल ने सन् 1971 में एक फिल्म का निर्माण भी किया था, जिसे फिल्मफेयर अवार्ड भी मिला। मोहन राकेश के द्वारा रचित 'आषाढ़ का एक दिन' को हिंदी साहित्य जगत में मील का पत्थर कहा जा सकता है।

लहरों के राजहंस

यह नाटक भी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया आधुनिक बोध कराने वाला प्रभावशाली नाटक है। ऐतिहासिक पात्रों के माध्यम से आधुनिक दुविधाग्रस्त मानव के द्वन्द्व, उसकी पीड़ा अलगाव बेचैनी को पूरी नाटकीयता के साथ प्रस्तुत किया गया है। महाकवि अश्वघोष की काव्य कृति सौन्दरानन्द पर आधारित नाटक में जीवन में प्रवृत्ति और निवृत्ति के द्वंद्व के कारण गहराते पीड़ा बोध को उद्घाटित किया गया है जिसमें नाटककार पूरी तरह सफल हुआ है। संवाद-योजना, पात्रों की मनः स्थिति के अनुकूल सफल, यथार्थपरक, चुस्त और तीक्ष्ण है जिसके कारण नाटक की प्रभावान्विति सतत बनी रहती है। भाषा नाटक की मूल संवेदना के अनुसार भावों और विचारों को वहन करने वाली है। अभिनेयता की दृष्टि से यह सफल नाटक है जिसके कारण कई संस्थाओं के द्वारा इसका सफल मंचन किया जा चुका है। 'लहरों के राजहंस' मोहन राकेश का दूसरा, सशक्त नाटक है। 'आषाढ़ का एक दिन' यदि भावना में भावना का वरण की कहानी है तो 'लहरों के राजहंस' नारी के आकर्षण-विकर्षण की अनुभूति की अभिव्यक्ति है। एक में समर्पित नारी का चित्रण है तो दूसरे में रूप पर गर्व करने वाली नारी की विविध मनः स्थितियों के संदर्भों का आलेखन है। कालिदास अपार मानसिक संघर्षों से पीड़ित आधुनिक मानव का प्रतिरूप तो नन्द प्रवृत्ति और निवृत्ति में पिसकर छटपटाते हुए प्राणों को लेकर जीवन के चौराहे पर खड़ा है। इसमें नाटककार मोहन राकेश ने भौतिकता और आध्यात्मिकता के मध्य उलझे हुए व्यक्ति की चेतना को नन्द और सुन्दरी के द्वंद्व के माध्यम से मुखरित करने का प्रयास किया है।

आधे-अधूर

मोहन राकेश का यह अत्यंत ख्याति प्रसिद्ध और चर्चित नाटक है। आधुनिक मध्य वर्गीय परिवार की विसंगतियों को यह नाटक यथार्थपरकता के साथ उद्घाटित करता है। पति-पत्नी के आपसी तनाव, परिवार के सदस्यों की घुटन, तनाव और बिखराव के रूप में पारिवारिक विघटन की समस्या को पूरी वास्तविकता के साथ यह नाटक सामने लाता है। आर्थिक आभावग्रस्तता और सुविधाओं की आकांक्षा, परिवेशगत दबाव और मानसिक तनाव में आधी-अधूरी जिन्दगी जीते पात्रों द्वारा पूर्णता पाने की लालसा में आपसी टकराहट नाटक की मूल संवेदना है। पत्नी सावित्री की कर्मठता तथा पारिवारिक जिम्मेदारी को अकेले उठाने के दर्द के साथ अपने महत्त्व का एहसास, पति महेन्द्रनाथ की निष्क्रियता जन्य निराशा और तनाव तथा पति के रूप में पत्नी की सम्पूर्ण पुरुष की अन्ततः असफल तालाश और इसी बीच परिवार के अन्य सदस्यों का एक दूसरे से कटाव इस नाटक का केन्द्र बिन्दु है। वस्तुतः यह नाटक मध्यवर्गीय परिवार की आकांक्षाओं, तृष्णाओं, लगाव व तनाव की कहानी है जिसे 'एक स्तर पर स्त्री पुरुष के बीच के लगाव और तनाव का दस्तावेज' कहा गया है। रंगमंच की दृष्टि से यह सफल नाटक है। यह नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस' की तुलना में भिन्न कोटि का नाटक है। आलोच्य नाटक में आज के मानव की अनियंत्रित एवं अंतहीन यंत्रणाओं के बीच नारी मुक्ति भावना, वैवाहिक संघर्षों की विडंबना, पुरुष के अधूरेपन तथा विघटनशील जीवन मूल्यों का प्रकर्ष है। समूचा नाटक घर के चार दीवार के अंदर के अधूरापन की कथा व्यंजित करता है। 'आधे-अधूरे' में मोहन राकेश ने मध्यवर्गीय परिवार की मनोस्थितियों का विश्लेषण मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया है। 'आधे-अधूरे' के सभी चरित्र आधे अधूरे हैं। आधुनिक परिवेश में जी रहे यह पात्र कुंठा और संत्रास के शिकार हैं। महेन्द्रनाथ और सावित्री पति-पत्नी के अटूट रिश्ते में बंधे हैं, फिर भी अलगाव की विशद छाया उनके संबंध पर निरंतर बनी रहती है। पूर्णता की खोज में दौड़ रही स्त्री (सावित्री) अधूरे पुरुष (महेन्द्रनाथ) को स्वीकार नहीं कर पाती, जबकि अहं पर निरंतर चोटें खा रहा महेन्द्रनाथ सावित्री से प्रेम करते हुए भी मानसिक तंगदिली में जी रहा है। यही तनाव, संशय और कुंठा इन दोनों की नियति बन गई है। सावित्री महेन्द्रनाथ को एक निठल्ला, बेकार और पराधीन पुरुष मानती है, जिसकी अपनी कोई अहमियत या माद्दा नहीं है। इसीलिए वह इसकी खोज अन्य स्थानों पर, अन्य पुरुषों से करती रहती है। जबकि महेन्द्रनाथ भी स्वयं को बार-बार घिसने वाला रबर का एक टुकड़ा समझता है जिसकी परिवार के सदस्यों की दृष्टि में कोई अहमियत नहीं है। अपने अहं पर बार-बार कुठाराघात होने पर वह सावित्री को मारता-पीटता है जिससे परिवार में घृणा, उपेक्षा और तंगदिली की रुग्ण छाया बनी रहती है। आधुनिक दौर के पितृसत्तात्मक परिवेश में घर का आर्थिक बोझा उठाती हुई सावित्री जैसी भारतीय स्त्री की स्थिति का यथार्थ निरूपण मोहन राकेश ने इस नाटक में किया है। सावित्री 'आधे-अधूरे' नाटक का प्रमुख नारी-चरित्र एवं नाटक की 'नायिका' है। मध्यमवर्गीय स्त्री का प्रतीक जो अर्थांजन की खोज, आधुनिक स्त्री, पत्नी के रूप में, फैशन को अपनाने वाली आधुनिक महिला, कामकाजी स्त्री, अति महात्वाकांक्षी स्त्री, जीवन में अनंत इच्छाओं को रखनेवाली स्त्री। नाटक में वह महेंद्रनाथ की नौकरी पेशा पत्नी के रूप में चित्रित की गयी है।

महेंद्रनाथ के साथ पिछले बाईस वर्षों से अपने वैवाहिक जीवन को ढो रही है। उसकी दो बेटियाँ -बिन्नी और किन्नी एवं बेटा है अशोक। घर की पूरी जिम्मेदारियाँ उसी पर हैं। कामचोर पति, दिनभर मैगजीन की कटिंग्स इकट्ठा करनेवाला निठल्ला लड़का, स्वयं के प्रेमी के साथ भाग जानेवाली स्वच्छंद बिन्नी और जिद्दी छोटी लड़की किन्नी से बना परिवार चलाते-चलाते तनाव और घुटन से तंग आ चुकी सावित्री का अहं उसे बार-बार मुक्त होने को प्रेरित करता रहता है नाटककार मोहन राकेश ने 'आधे-अधूरे' नाटक की नायिका 'सावित्री' के द्वारा नारी की मुक्ति भावना, विघटनशील जीवनमूल्य, वैवाहिक संबंधों की विडंबना आदि पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। यह नाटक स्वातंर्त्योत्तर परिवर्तित सामाजिक परिवेश में एक परिवार के आपसी तनाव के बीच उठते क्यों? और कैसे? के प्रश्नों का अपने ढंग से संश्लेषण है। खुद नाटककार उसके बारे में लिखते हैं- 'उम्र चालीस को छूती। चेहरे पर यौवन की चमक और चाह फिर भी शेष ब्लाउज और साड़ी साधारण होते हुए भी सुरुचिपूर्ण।' सावित्री हँसते-खेलते जिंदगी जीना चाहती है, वह भी भरी-पूरी जिंदगी। उच्च वर्गीय औरतों की तरह जीवन में बहुत कुछ प्राप्त करना चाहती है। 'आधे-अधूरे' आधुनिक मध्यवर्गीय, शहरी परिवार की कहानी है। इस परिवार का प्रत्येक सदस्य अपने को अधूरा महसूस करता है। हर सदस्य अपने को पूर्ण करने की चेष्टा करता है। पत्नी सावित्री पति के पास काम नहीं रहने की वजह से नौकरी करने घर से बाहर निकलती है। उसे तब पति में दायित्वबोध की कमी नजर आती है। उसे लगता है कि वह सबसे बेकार आदमी है। वह सम्पूर्ण मनुष्य नहीं है। बाहर निकलने पर सावित्री की मुलाकात चार लोगों से होती है। एक है धनी व्यक्ति, वह मित्र स्वभाव का है और सज्जन व्यक्ति है। दूसरा डिग्री धारी व्यक्ति शिवदत्त है जो सारे संसार में घूमता रहता है। वह एकनिष्ठ नहीं है। तीसरा सामाजिक व्यक्ति है, मनोज। वह सावित्री से दोस्ती तो गांठता है पर उसकी बेटी से प्रेम विवाह करता है। और चौथा व्यक्ति एक व्यापारी है। वह चालाक और घटिया किस्म का आदमी है। चालीस वर्षीय सावित्री जिसके चेहरे पर अभी भी चमक बरकरार है, अपनी जिन्दगी के खालीपन को भरने के लिए एक सम्पूर्ण पुरुष की तलाश में रहती है। इस क्रम में वह इन पुरुषों के सम्पर्क में आती है। इनसे संबंध बनाकर भी उसे पूर्णता का अहसास नहीं होता। हर व्यक्ति अपने-अपने ढंग से अपने-अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए उसका उपयोग करता है।

पैर तले की जमीन

यह मोहन राकेश का अन्तिम नाटक है जिसका खाका उन्होंने अपने जीवन काल में पूरा कर दिया था किन्तु इसे नाटक का आकार देने का कार्य उनके मित्र कमलेश्वरजी ने किया। पर इस बात का ध्यान रखा गया कि वह पूरी तरह से मोहन राकेश का ही नाटक रहे। उसमें किसी दूसरे के स्पर्श का आभास न हो। दो अंकों में विभाजित इस नाटक की सम्पूर्ण घटना एक ही स्थान पर घटती है। अपने मनोरंजन के लिये एक स्थान पर एकत्रित हुए लोगों के चेहरों से सन्निकट आती मौत से एक-एक कर के नकाब हटने लगते है। मृत्यु बोध व्यक्ति के अन्दर तरह-तरह के भाव पैदा करता है। अतीत की स्मृतियाँ, राग संबंधों से वितृष्णा तथा अपने किये गये अपराधों का तीव्र-बोध। वस्तुतः यह नाटक मृत्यु बोध के त्रासद, पीड़क भयानक क्षणों में अकेलापन, भय, निर्णय और बेबसी जैसे मनोभावों को यथार्थ शैली में नाटकीयता के साथ व्यक्त करता है। 'पैर तले की जमीन' मोहन राकेश का अंतिम, किंतु अधूरा नाटक है जिसे उनके आत्म मित्र कमलेश्वर ने राकेश के मृत्यु के बाद पूरित किया। अनिता राकेश के शब्दों में - 'पैर तले की जमीन' को अपनी आँखें मूंद जाने से वर्षों पहले ही राकेश ने लिखा था। जिस दिन धोखा देकर वे सदा के लिए चले गये थे तब भी टाइपरैटर पर इसी नाटक का एक पृष्ठ, आधा टाइप किया, आधा खाली रह गया था। इस नाटक में राकेश ने शब्दों और नेपथ्य की ध्वनियों के मिले-जुले प्रभाव को रंगमंच पर एक नये प्रयोग के रूप में प्रस्तुत कर वर्तमान युग में व्यक्ति के सामाजिक मूल्य-विघटन तथा मानवीय संबंधों के खोखलापन को मूर्त किया है।

उपसहांर

मोहन राकेश जी की सृजनात्मक प्रवृत्तियों एवं कृतियों ने उन्हें स्वतंत्र रूप से जीने को बाध्य किया। इन्होंने नाटक, उपन्यास, कहानी, आलोचना, एकांकी जैसी सभी विधाओं पर अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ी। मोहन राकेश को प्रसादोत्तर युगीन प्रयोगशील नाटक साहित्य का प्रमुख स्तंभ माना जाता है। इन्होंने हिंदी साहित्य को एकांकी, नाटक, निबंध समीक्षा, यात्रा संस्मरण आदि पर विभिन्न कृतियां प्रदान की हैं जिनमें आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस, अंडे के छिलके, आधे-अधूरे विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मोहन राकेश के नाटक जब प्रकाशित हो रहे थे तब हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श का वैसा रूप स्पष्ट नहीं था जैसा कि आज है। संविधान ने स्त्री-पुरुष समानता का अधिकार तो दे दिया था किंतु 1956 में हिंदू कोड़ बिल पारित होने के बाद ही स्त्रियों को वयस्क मताधिकार प्राप्त हुआ। कानूनी स्तर पर समानता मिलने पर भी सामाजिक स्तर पर नारी की स्थिति पिछड़ी हुई थी जिसका प्रतिबिंब साठ के दशक की चर्चित कथाकार उषादेवी मित्रा के उपन्यासों में देखा जा सकता है। 1960 के बाद कृष्णा सोबती, शिवानी, उषा प्रियंवदा जैसी कई नयी महिला कथाकार सामने आई जिन्होंने शिक्षित, नौकरी पेशा और प्रणय संबंध में बंधी स्त्रियों की समस्यओं को अपने कथा-साहित्य में प्रस्तुत किया। किंतु सत्तर के दशक तक नारी का वह स्वतंत्र रूप साहित्य में नहीं दिखाई देता, जो नारी-विमर्श के जोर पकड़ने के पश्चात के साहित्य में दिखाई देता है। इस परिप्रेक्ष्य में मोहन राकेश के नाटकों को देखा जा सकता है। इनके नाटकों में मुख्य रूप से स्त्री-पुरुष संबंध और पुरुष अहं की समस्या का निरूपण किया गया है। अतः मोहन राकेश के नाटकों में पुरुष अहं और यह अहं स्त्रियों की स्वतंत्रता, उनके अधिकारों में किस प्रकार की भूमिका निभाता है उसे स्त्रीवादी विमर्श के आईने में देखना रोचक विषय बन सकता है। मोहन राकेश द्वारा हिंदी साहित्य की अनंत सेवा की गई जिसके लिए वे हमेशा स्मरणीय रहेंगे तथा याद किए जाते रहेंगे। इनकी कृतियां हिंदी साहित्य की अक्षय निधि हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. आधुनिक हिन्दी नाटक, अग्रदूत-मोहन राकेश -गोविन्द चातक।
2. पारसी हिन्दी रंगमंच -डॉ. लक्ष्मीनाराण लाल।
3. मोहन राकेश के साहित्य में सामाजिक यथार्थ -डॉ.बसन्त कुमार परिहार।
4. लहरों का राजहंस -मोहन राकेश।
5. आषाढ़ का एक दिन -मोहन राकेश।
6. आधे अधूरे -मोहन राकेश।
7. नई कहानी के आंदोलन के स्तंभ मोहन राकेश -ओम शिवपुरी।